भारत में विद्यालय स्तर पर कृषि–शिक्षा की प्रासंगिकता : सम्भावनाएँ एवं चुनौतियाँ

– प्रकृति भार्गव

वर्ष 2016 में, संयुक्त राष्ट्र संघ के सतत विकास के लक्ष्यों में 'भूख का अन्त, खाद्य–सुरक्षा तथा पोषण–स्तर को बेहतर करने' के साथ ही 'सतत कृषि को बढ़ावा देना' एक महत्वपूर्ण विषय है। एम. एस. स्वामीनाथन का मानना है कि शिक्षा, जनजागरण तथा उपयुक्त तकनीकी इस कार्य में महती भूमिका निभा सकते हैं। सतत कृषि–विकास की अवधारणा का महत्व भारत जैसे देश में इसलिए प्रासंगिक हो जाता है चूँकि आज भी हमारे देश में 43% लोग कृषि–रोज़गार पर निर्भर हैं (दि वर्ल्ड बैंक डेटा, 2018)। यह आँकड़ा केवल उनको दर्शाता है, जो प्रत्यक्ष रूप से कृषि से आय प्राप्त कर रहे हैं तथा जो सरकारी रूप से कृषक श्रेणी में आते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर लोगों की संख्या इस आँकड़े से कहीं अधिक है। प्रस्तुत लेख में लेखक का तर्क है कि जब इतनी बड़ी संख्या में लोग कृषि पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्भर हैं तो कृषि में नयी चुनौतियों को देखते हुए हमारी विद्यालयी शिक्षा इसके प्रति इतनी उदासीन क्यों है? विज्ञान, गणित, भूगोल, साहित्य, अर्थशास्त्र तथा नागरिक शास्त्र जैसे विषयों में कृषि तथा उससे सम्बन्धित पहलुओं को समावेशित नहीं किया जा सकता क्या? भारत में कृषि केवल एक आर्थिक प्रक्रिया नहीं है, वरन यह एक सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन–शैली है, जो ग्रामीण भारत तक सीमित न हो कर नगरों और कस्बों में लोगों को अनेक रूप से प्रभावित करती है।

केरल राज्य के त्रिचूर और अलापुज़हा ज़िलों में उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की कृषि–शिक्षा में रुचि को समझने के लिए किये गये शोध ने स्कूली स्तर पर इस क्षेत्र में आ रही चुनौतियों को उजागर किया है। ग्यारहवीं व बारहवीं की जीव विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों के 632 पृष्ठों में से मात्र 16 पृष्ठों में कृषि से सम्बन्धित पाठ्यसामग्री पायी गयी। अतः यह कहा जा सकता है कि जीव विज्ञान के पाठ्यक्रम का मात्र 2.5% ही कृषि विज्ञान से सम्बन्धित है। इस शोध में यह भी पाया गया कि 36% विद्यार्थियों का यह मानना था कि कृषि समाज के कम संसाधन सम्पन्न लोगों के लिए बनी है, जबकि 44% का यह मानना था कि शिक्षित युवकों को उद्योगों की तरफ़ जाना चाहिए, परन्तु 84% अध्यापकों का यह मानना था कि प्रयोग पर आधारित कृषि को पाठ्यक्रम में समावेशित करना चाहिए (फातिमा, 2013)।

केन्या में कृषि–शिक्षा को विद्यालय स्तर पर समाविष्ट करने में आ रही चुनौतियों को रेखांकित करते हुए एक शोध ने स्कूल–फॉर्म, कृषि के उपकरण एवं कृषि की प्रयोगशालाओं जैसे संसाधनों की कमी तथा कुछ संस्थागत कठिनाइयों यथा शिक्षकों पर कार्य का बोझ आदि को इसका मुख्य कारण माना है। इसके अतिरिक्त ग़ैर–संस्थागत कारण जैसे, कृषि की मौसम पर निर्भरता, कृषि में अत्यधिक श्रम की ज़रूरत तथा कृषकों की आर्थिक विपन्नता जैसे सामाजिक–आर्थिक कारकों को भी कृषि में अरुचि उत्पन्न करने की दिशा में उत्तरदायी माना गया है (वेथेरा, 2013, पृ. 171)।

वर्ष 2007 में संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रारम्भिक और जूनियर हाई स्कूल स्तर पर इलिनॉयस काउंटी में किये गये एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि कृषि को पाठ्यक्रम में समाविष्ट करने में बड़ी कठिनाई होती है, जिसका प्रमुख कारण संसाधनों का अभाव है। पाठ्यक्रम से सम्बन्धित संसाधन, प्रयोग–कार्य व क्रियाकलापों का अभाव कृषि–शिक्षा को स्कूल पाठ्यक्रम में समाविष्ट करने में अवरोध उत्पन्न करते हैं। अमेरिका में "कक्षा में कृषि" इस संकल्पना की बुनियाद 1977 में इलिनॉयस काउंटी के एक शिक्षक ने रखी, जिसके द्वारा 1981 में सरकारी सहायता से कृषि–स्कूल कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ। 2010 में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार माध्यमिक स्तर पर पंजीकृत विद्यार्थियों में मात्र 12% विद्यार्थियों को किसी–न–किसी रूप में कृषि का ज्ञान प्रदान किया जाता था (मर्सर, 2015)।

एक अन्य शोध में सेंट्रल लोवा क्षेत्र के स्कूलों में किये गये सर्वेक्षण से यह ज्ञात होता है कि माध्यमिक व जूनियर हाई स्कूल स्तर के शिक्षकों का यह मानना था कि कृषि–पाठ्यक्रम को विभिन्न विषयों यथा विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गणित, भूगोल, साहित्य आदि के साथ सम्बन्धित कर के कृषि में अभिरुचि उत्पन्न की जा सकती है (नॉब्लोच, 1997)।

औपनिवेशिक भारत में कृषि–शिक्षा का विकास

औपनिवेशिक भारत में कृषि–शिक्षा की औपचारिक नीति की बुनियाद बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में हुई, परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में जे. ए. वोल्कर की "रिपोर्ट ऑन दि इम्प्रूवमेंट ऑफ़ इण्डियन एग्रीकल्चर" में कृषि–शिक्षा का उल्लेख मिलता है। इस रिपोर्ट में वोल्कर ने कृषि–शिक्षा के स्वरूप, पाठ्यचर्या तथा पाठ्यक्रम के शिक्षा के विभिन्न स्तरों यथा, प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च स्तर में शिक्षण का विस्तार से वर्णन किया है। इस रिपोर्ट के अनुसार कृषि–शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जो कृषकों को ज्ञानार्जन द्वारा आत्मनिर्भर व सशक्त बनाता है। वस्तुतः सरकार द्वारा कृषि–क्षेत्र में किये जा रहे आमूलचूल परिवर्तन तब तक प्रभावी नहीं हो सकते जब तक कृषक स्वयं नवीन ज्ञान एवं चुनौतियों के लिए जागरूक न हों। यही नहीं, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के निवेश से

कृषि–क्षेत्र बीज, उर्वरक, कीटनाशक तथा उपकरण आदि का एक बड़ा बाज़ार बनता जा रहा है। वोल्कर के अनुसार कृषक समाज के मध्य शिक्षा के व्यापक प्रसार से जहाँ एक ओर कृषक के ज्ञान में अभिवृद्धि होगी, वहीं दूसरी ओर जागरूक कृषक सरकारी अफ़सरों से भयमुक्त हो सकेगा तथा अपने अधिकारों के लिए जागरूक बनेगा। इसके अतिरिक्त उन्हें अपनी समस्याओं को उचित मंच पर उठाने में मदद मिलेगी तथा नवीन विचारों को सहज रूप से ग्रहण करने में भी सहायता मिलेगी। अतः यह कहा जा सकता है कि शिक्षा न केवल कृषक को अपने अधिकारों के लिए जागरूक करायेगी, वरन नवीन ज्ञान के अधिग्रहण तथा उसके व्यावहारिक उपयोग में मदद करेगी (वोल्कर, पृ. 378)।

वोल्कर ने शिक्षा के प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च स्तर के लिए पाठ्यचर्या की विस्तृत योजना अपनी रिपोर्ट में दी है, जिसका यहाँ संक्षेप में वर्णन किया गया है। उसके अनुसार हाई स्कूल स्तर पर सामान्य विज्ञान की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाये तथा प्रयोगात्मक ज्ञान के लिए एक इलस्ट्रेशन फार्म (illustration farm) में उस क्षेत्र में उगाये जाने वाली फ़सलों को दिखाया जाये। मिडिल स्तर पर वनस्पति विज्ञान तथा फ़िज़ियोलॉजी का विशेष अध्ययन कराया जाये। कृषि की उच्च शिक्षा के लिए वोल्कर ने स्नातक स्तर पर विज्ञान–शिक्षा के साथ कृषि से सम्बन्धित विषयों यथा कृषि रसायन विज्ञान, मृदा विज्ञान, कृषि शास्त्र को समावेशित करने का सुझाव दिया (वोल्कर, 1893)।

भारत में बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में अकाल, महामारी तथा बेरोज़गारी ने जनमानस को आर्थिक रूप से झकझोर दिया था। तत्कालीन गवर्नर जनरल कर्ज़न का यह विश्वास था कि विज्ञान के प्रयोग से कृषि की समस्याओं को सुलझाया जा सकता है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए कर्ज़न ने अमेरिका के उद्योगपति हेनरी फिप्प द्वारा प्रदान अनुदान से इण्डियन एग्रीकल्चर रिसर्च इंस्टिट्यूट की दरभंगा (बिहार) में 1905 में स्थापना की। यह पूसा इंस्टिट्यूट (फिप्प ऑफ़ यू.एस.ए., PUSA) के नाम से विख्यात हुआ (रंधावा, 1983, 270)। इस संस्थान में कृषि के विभिन्न विषयों में परास्नातक स्तर की शिक्षा तथा अनुसंधान की व्यवस्था की गयी। इसी के साथ–साथ तत्कालीन सरकार ने कृषि–शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए देश के विभिन्न भागों में क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये कृषि की समस्याओं के समाधान हेतु कृषि महाविद्यालयों की स्थापना की। कालान्तर में पंजाब के लायलपुर, संयुक्त प्रान्त में कानपुर, बॉम्बे प्रेसीडेंसी में पूना, केन्द्रीय प्रान्त में नागपुर, मद्रास प्रेसीडेंसी में कोयम्बटूर तथा बंगाल में साबूर में कृषि महाविद्यालयों की स्थापना की गयी (मंगम्मा, 1990, 45)। इन महाविद्यालयों में शिक्षा प्रदान करने का मुख्य उद्देश्य सरकार के कृषि–विभाग के लिए योग्य अधिकारी प्रदान करना तथा वैज्ञानिक अनुसंधान दवारा नक़दी फ़सलों के उत्पादन में वृद्धि करना था। देश के विभिन्न भागों में स्थापित यह महाविद्यालय भारतीय कृषि की समस्याओं को मूल रूप से सुलझाने में असमर्थ थे

और इनमें आने वाले विद्यार्थी सरकारी नौकरी के प्रलोभन में कृषि–शिक्षा का चयन करते थे। महाविद्यालय स्तर पर कृषि–शिक्षा की प्रभावहीनता को देखते हुए जून 1917 में शिमला में आयोजित कृषि–शिक्षा के सम्मेलन में पहली बार कृषि–शिक्षा को विद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने का प्रस्ताव पारित किया गया तथा इस बात को भी रेखांकित किया गया कि तत्कालीन शिक्षा–व्यवस्था ग्रामीण भारत की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम नहीं है। इस समस्या का मूल कारण, सन्दर्भ–विहीन पाठ्यपुस्तकें तथा अध्यापकों के प्रशिक्षण का अभाव है। इस बात को भी स्वीकार किया गया कि उन्नत कृषि पद्धतियों के प्रदर्शन से जहाँ एक ओर युवा कृषक नवीन ज्ञान को सीख सकेंगे वहीं कृषि–शिक्षा भविष्य के लिए कुशल कृषक को तैयार करने में मदद करेगी। इन बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए इस सम्मेलन ने प्रत्येक प्रान्त में कृषि को मिडिल स्कूल या उच्च प्राथमिक स्कूल के पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की संस्तुति दी। कृषि–शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को उन्नत कृषि में प्रशिक्षित करना था, जिससे वे उस कार्य को वैज्ञानिक ढंग से कर सकें। इन विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति कृषि महाविद्यालयों के सफल विद्यार्थियों में से करने का भी प्रस्ताव पारित किया गया (बोर्ड ऑफ़ एग्रीकल्चर, 1918, 90)।

तदन्तर, देश के विभिन्न प्रान्तों ने इन संस्तुतियों की अपनी तरह से विवेचना कर इनको लागू करने का प्रयास किया। संयुक्त प्रान्त के बुलन्दशहर में एक कृषि विद्यालय की स्थापना की गयी, जिसमें अठारह वर्ष से कम आयु के विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाता था। इस विद्यालय में कृषि विज्ञान तथा जन्तु–चिकित्सा का सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक ज्ञान प्रदान किया जाता था। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा थी और अंग्रेजी भाषा को एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता था। विद्यालय का मासिक शुल्क 3 रुपए था तथा कुछ चयनित विद्यार्थियों को 12 रुपए वार्षिक की छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती थी। इस पाठ्यक्रम के अतिरिक्त फील्डमैन व इंजन ड्राइवर के लघु अवधि प्रशिक्षण की भी व्यवस्था थी (बोर्ड ऑफ़ एग्रीकल्चर, 1924, 38)।

विद्यालय स्तर पर कृषि–शिक्षा को समन्वित करने की यह योजना पंजाब प्रान्त की सरकार द्वारा सामान्य माध्यमिक विद्यालयों में कृषि को वैकल्पिक विषय के रूप में समाविष्ट कर के आरम्भ की गयी, जो बॉम्बे प्रेसीडेंसी तथा संयुक्त प्रान्त में शुरू किये गये विशेष कृषि–विद्यालयों से भिन्न व्यवस्था थी। पंजाब प्रान्त में कृषि को शिक्षा–विभाग द्वारा संचालित विद्यालयों में एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता था। इसके प्रभावी अध्ययन के लिए प्रत्येक विद्यालय के साथ एक उद्यान सम्बद्ध होता था, जिससे विद्यार्थी कक्षा में प्राप्त सैद्धान्तिक ज्ञान को व्यावहारिक रूप से स्वयं कर के समझ सकें (बोर्ड ऑफ़ एग्रीकल्चर, 1924, 39–40)। पंजाब में इस तरह के 66 विद्यालयों में कृषि–शिक्षा प्रदान की जाती थी, जिसमें से 26 विद्यालयों के साथ फार्म तथा 40 विद्यालयों के साथ उद्यान सम्बद्ध थे (रॉयल

कमीशन ऑन एग्रीकल्चर, 1928, 534)। इन विद्यालयों में कृषि–शिक्षक की नियुक्ति लायलपुर के कृषि महाविद्यालय के सफल विद्यार्थियों में से की जाती थी। विद्यालय में कृषि–शिक्षक बनाने हेतु इस महाविद्यालय में एक वर्ष का विशेष पाठ्यक्रम चलाया जाता था।

बंगाल ने भी पंजाब की तर्ज पर कृषि–शिक्षा को सामान्य माध्यमिक विद्यालयों में समावेशित करने का प्रयास किया, जो सफल रहा। कालान्तर में संयुक्त प्रान्त में भी कृषि–शिक्षा को सामान्य विद्यालय पाठ्यक्रम में समावेशित किया गया। भारत सरकार द्वारा 1928 में कृषि की समस्याओं की जाँच के लिए नियुक्त "रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर इन इण्डिया" ने कृषि–शिक्षा सम्बन्धी अपनी समीक्षा में पंजाब प्रान्त के कृषि–शिक्षा के मॉडल की प्रशंसा की तथा इसको सम्पूर्ण देश में लागू करने का सुझाव दिया। इस कमीशन ने यद्यपि इस बात को रेखांकित किया कि कृषि पाठ्यक्रम क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप हों। साथ ही इस कमीशन ने कृषि–शिक्षा के लिए अलग से चलाये जा रहे विद्यालयों को अस्वीकार किया क्योंकि ये विद्यालय प्रचलित शिक्षा–व्यवस्था से अलग–थलग रहे और कृषक समाज को अपनी ओर आकर्षित करने में असमर्थ रहे। यही नहीं, अध्यापकों की प्रशिक्षण–सम्बन्धी समस्याओं तथा प्रान्तीय विविधताओं को ध्यान में रखते हुए वोकेशनल स्कूल (कृषि) के स्थान पर वर्नाकुलर मिडिल स्कूल में कृषि का शिक्षण प्रदान करना अधिक प्रभावी माना गया (रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर, 1928, 536)।

कृषि–शिक्षा के क्षेत्र में सरकारी प्रयासों के साथ–साथ ईसाई मिशनरी, धार्मिक संगठनों और कुछ व्यक्तियों द्वारा किये गये प्रयासों ने शिक्षा के लिए नवीन प्रकार के मॉडल प्रदान किये। खालसा कॉलेज, अमृतसर ने कृषि–शिक्षा के क्षेत्र में एक जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत किया। यूँ तो इस कॉलेज की स्थापना 1892 में हुई थी, पर यहाँ 1915 से जी. ए. वाथन (G.A. Wathen) के नेतृत्व में हाई स्कूल स्तर पर कृषि–शिक्षा को समावेशित किया गया था (ब्रूनर, 2018, 82)। इस विद्यालय में संचालित कृषि–फार्म, डेयरी तथा सहकारी संस्था ने पंजाब क्षेत्र में अपनी एक मिसाल क़ायम की। इस कॉलेज की शिक्षा–व्यवस्था ग्रामीण पुनर्निर्माण के मॉडल के साथ–साथ एक नयी एवं उन्नतशील शिक्षा–व्यवस्था का भी सफल प्रयोग सिद्ध हुई। इस संस्था में 1920–30 के दशक में विदेश में शिक्षित भारतीयों ने शिक्षक के रूप में अपनी सेवाएँ दीं, जिससे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण विकास के क्षेत्र में विकसित हो रहे नये विचारों, अनुभवों व कौशल का भी इसे लाभ प्राप्त हुआ।

मिशनरी संस्थाओं ने कृषि–विकास के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। संयुक्त प्रान्त के इलाहबाद नगर में 1910 में "इंस्टिट्यूट ऑफ़ एग्रीकल्चर" की स्थापना वाल्श मिशनरी सैमुएल हेगैन्बोटम (Samuel Higgenbottom) ने की। इस

इंस्टिट्यूट में कृषि को व्यावहारिक रूप से पढ़ाया जाता था, जिसके चलते विद्यार्थी प्रत्येक दिन खेत में अधिक से अधिक समय लगाते थे। और वे समीप के गाँवों में जा कर कृषक के सीमित संसाधनों के कारण उनके समक्ष आने वाली कृषि सम्बन्धित समस्याओं को समझने का प्रयास करते थे। विद्यार्थियों का इस प्रकार से कृषक को समझने का प्रयास इसलिए महत्वपूर्ण था क्योंकि इंस्टिट्यूट में पढ़ने वाले अधिकतर विद्यार्थी शहरी पृष्ठभूमि से आते थे, जिसके कारण उन्हें ग्रामीण परिवेश का तनिक भी ज्ञान नहीं होता था (हेस, 1968)।

रेय कार्टर, प्रेस्बीटेरियन मिशनरी (Ray Carter, presbeterain missionary) ने पंजाब के मोगा कस्बे में कृषि–शिक्षा के लिए सामुदायिक मिडिल स्कूल खोला तथा कुछ वर्षों बाद शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए विद्यालय भी प्रारम्भ किया गया। 1914 से इस विद्यालय के संचालन के लिए मिशन ने तीन अमेरिकी शिक्षकों यथा विलियम मैकी (William McKee), आर्थर (Arther) और इरीन हार्पर (Irene Harper) को पंजाब भेजा। ये सब जॉन ड्युई के सुधारवादी विचारों से प्रभावित थे। इन तीनों ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की थी (हेस, 1968)। मोगा विद्यालय ने शिक्षा की "जीवन केन्द्रित" अवधारणा को प्रारम्भ किया, जिसके अनुसार विद्यार्थी को जीवन की किसी एक विधा को अध्ययन हेतु चुनना था, जिसके बाद अगले पाँच वर्ष में उन्हें इनमें से कोई एक व्यावसायिक शाखा यथा फार्म, बाज़ार, ग्रामीण समुदाय, गाँव का शहरों से सम्बन्ध जैसे विषयों को जीवकोपार्जन का आधार बनाना होता था। विद्यालय के पाठ्यक्रम से प्रभावित हो कर शिक्षा–विभाग, पंजाब सरकार ने प्रान्त के प्राथमिक स्तर के अध्यापकों के प्रशिक्षण–विद्यालयों में इसे संचालित किया। 1932 की सरकारी रिपोर्ट के अनुसार लगभग 200 विद्यालयों में विद्यार्थी फार्म पर कार्य करते थे (हेस, 1968, 30)।

उक्त संस्थागत प्रयासों के अतिरिक्त, रवीन्द्रनाथ टैगोर ने व्यक्तिगत रूप से वैज्ञानिक कृषि के महत्व को समझते हुए इस दिशा में नव प्रयास आरम्भ किये। उनके प्रयासों की गम्भीरता का द्योतक यह है कि उन्होंने अपने ग्रामीण पुनर्निर्माण के विचारों को चरितार्थ करने के लिए अपने पुत्र रतीन्द्रनाथ तथा दामाद नागेन्द्रनाथ गंगोपाध्याय को इलीनोइस विष्वविद्यालय, अमेरिका में कृषि व पशुपालन के अध्ययन हेतु भेजा। अमेरिका से शिक्षा प्राप्त कर इन दोनों नवयुवकों ने टैगोर के सपने को मूर्त रूप देने के लिए श्रीनिकेतन संस्था की स्थापना में सहयोग दिया। श्रीनिकेतन में ग्रामीण पुनर्निर्माण के विभिन्न कार्यों यथा, नयी प्रजाति की फ़सलों को उगाना, नयी एवं उन्नत कृषि–तकनीकी का प्रयोग, आधुनिक कृषि–यन्त्रों का उपयोग, उन्नत बीज तथा खाद का उपयोग, मृदा की जाँच की विधियाँ तथा कृषि–उपज को बाज़ार उपलब्ध कराने जैसे कार्यों को किया जाता था। यही नहीं, यह संस्था अप्रेंटिसशिप (apprenticeship) व्यवस्था द्वारा प्रशिक्षण भी प्रदान करती थी। वस्तुतः श्रीनिकेतन ऐसी संस्था थी जो सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान के अन्तर को पाटते हुए स्वयं ग्रामीण समुदाय

की समस्याओं को अध्ययन का केन्द्र बना कर उनका निदान प्रदान करती थी, न कि बिना उनकी परिस्थितियों को समझे उनके ऊपर कोरे ज्ञान को थोपती थी (राहा, 2016)।

ब्रिटिश सरकार ने भारत में ग्रामीण विकास की पूर्ण रूप से अवेहलना की। इस शताब्दी के दूसरे दशक में गाँधीजी के विचारों ने सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना के विकास के साथ ही साथ ग्रामीण विकास को राजनीतिक बल प्रदान किया। 1937 में वर्धा शिक्षा संगोष्ठी में गाँधीजी की नयी तालीम की योजना शिक्षा को औपनिवेशिक शिक्षा से बन्धन मुक्त करने की दिशा में एक ठोस प्रयास थी। गाँधीजी की इस योजना में समाज के हाशिये पर खड़े लोगों के द्वारा किये जाने वाले उत्पादक कार्य को पाठ्यक्रम के केन्द्र में रख कर उससे ज्ञान, मूल्यों के विकास तथा कौशल का संवर्धन किया जा सकता है। गाँधीजी का यह विश्वास था कि ज्ञान व्यापक रूप से श्रम आधारित कार्य करने वाले जनमानस में फैला हुआ है, जिसकी औपनिवेशिक शिक्षा–व्यवस्था पूर्ण रूप से अवहेलना करती है (सदगोपाल 2016)।

भारत की दयनीय स्थिति तथा महात्मा गाँधी के ग्रामीण स्वराज के दर्शन ने औपनिवेशिक सरकार को भारत की ग्रामीण समस्याओं को विस्तारपूर्वक समझने के लिए बाध्य किया। सरकार ने 1928 में 'रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर' का गठन किया जिसने भारत में ग्रामीण–विकास की समस्या का विस्तृत अध्ययन किया। रॉयल कमीशन ने यह स्वीकार किया कि भारत में ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के बिना कृषि में विकास अधूरा है और इस विकास को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए ग्रामीण जनमानस में शिक्षा के व्यापक प्रचार–प्रसार की महती आवश्यकता है। ब्रिटिश सरकार की शिक्षा सम्बन्धी नीतियों में किसान की शिक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया गया था। कृषि–शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बड़े ज़मीदारों, कुलीन वर्ग के सदस्यों तथा समृद्ध किसानों को कृषि महाविद्यालयों में शिक्षा प्रदान करना रहा, जिससे वे प्रान्तीय सरकारों के कृषि–विभाग में अपनी सेवाएँ प्रदान कर सकें। इस नीति में यह विचार किया गया कि इस वर्ग के विद्यार्थी कृषि–विज्ञान के अध्ययन द्वारा कृषि को उन्नत बनाएँगे तथा इस ज्ञान को साधारण किसान तक पहुँचाएँगे। व्यावहारिक रूप से सरकार की यह अवधारणा भ्रामक सिद्ध हुई और देश का आम किसान और भूमिहीन खेतिहर मज़दूर विद्यालय में प्रवेश से वंचित रहा। इस विसंगति को दूर करने के लिए आयोग ने सामान्य माध्यमिक विद्यालयों में कृषि के ज्ञान को समावेशित करने का सुझाव दिया (रॉयल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर, 1298)।

स्वतन्त्र भारत में कृषि–शिक्षा के लिए प्रयास

भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है, परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत पूर्ण रूप से खाद्यान के क्षेत्र में आत्मनिर्भर नहीं था। अतः 1948 में भारत में उच्च शिक्षा में सुधार के लिए गठित विश्वविद्यालय आयोग, जिसे राधाकृष्णनन आयोग के नाम से जाना जाता है, ने ग्रामीण भारत के विकास के लिए ग्रामीण विश्वविद्यालय का सुझाव रखा। आयोग के अनुसार ग्रामीण भारत में विद्यालय स्तर की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य स्थान विशेष की परिस्थितियों व आवश्यकताओं से परिचित कराना होना चाहिए (विश्वविद्यालय कमीशन, 1949, पृ. 171)। ग्रामीण क्षेत्रों में माध्यमिक स्तर पर आवासीय विद्यालय हों, जो गाँव के लिए ग्रामीण स्वास्थ्य, ग्रामीण पुस्तकालय, ग्रामीण कृषि–सहायता केन्द्र, सहकारी बैंक एवं अन्य सुविधाएँ प्रदान कर सकें। विद्यालय स्तर की शिक्षा को "एकीकृत सामाजिक शिक्षा" के रूप में विकसित करने का सुझाव दिया गया जिससे विद्यार्थी जब विद्यालय से निकलें तो गाँव के विकास में अपना योगदान कर सकें। गाँधीजी द्वारा प्रदत्त 'बुनियादी शिक्षा' को इन विद्यालयों के पाठ्यक्रम का आधार बनाने की संकल्पना की गयी (विश्वविद्यालय कमीशन, पृ. 488)। राजनीतिक रूप से इस आयोग की संस्तुतियों को राज्य का समर्थन न मिलने के कारण इसे कभी भी मूर्त रूप प्रदान नहीं कराया जा सका।

भारत सरकार ने 1950 के दशक में माध्यमिक स्तर पर शिक्षा को विश्वविद्यालय की शिक्षा तथा भारत के औद्योगिक विकास के लिए कुशल श्रमिकों के निर्माण के लिए अपरिहार्य माना। इस ध्येय की पूर्ति के लिए 1952 में डॉ. ए. लक्ष्मीनारायण मुदालिअर की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग का 1952 में गठन किया गया (रिर्पोट ऑफ़ दि सैकण्डरी एजुकेशन कमीशन, 1953, III)। इस आयोग ने सीनियर बेसिक व हाई स्कूल स्तर के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक ज्ञान को समावेशित करने का सुझाव दिया। आयोग ने हाई स्कूल स्तर में मुख्य रूप से पाँच व्यवसायों/संकायों यथा मानविकी (Humanities), विज्ञान (Sciences), तकनीकी (Technical), कृषि (Agriculture), ललित कलाएँ (Fine Arts) और गृह–विज्ञान (Home Science) को वैकल्पिक समूह के रूप में प्रदान करने का सुझाव दिया। आयोग का यह मानना था कि इन विषय समूहों को लेने से यह सुनिश्चित नहीं होता कि विद्यार्थी को उस विषय का सम्पूर्ण ज्ञान हो जायेगा, परन्तु वह व्यक्ति सामान्य रूप से उस विषय का ज्ञान प्राप्त करेगा जिससे भविष्य में इस दिशा में आगे बढ़ने में मदद मिलेगी (रिर्पोट ऑफ़ दि सैकण्डरी एजुकेशन कमीशन, 1953, III , 71)। विद्यालय में इन संकायों की शिक्षा को प्रभावी रूप से संचालित करने के लिए प्रयोगात्मक कार्य अति महत्वपूर्ण था। अतः सुविधाएँ उपलब्ध करना अत्यन्त चुनौतीपूर्ण था। यही नहीं, धन की भी महती आवश्यकता थी। राजनीतिक कारणों से विद्यालय–शिक्षा के प्रति उदासीनता के कारण तत्कालीन सरकार/सरकारें इन संस्तुतियों को सही भावना के साथ क्रियान्वित करने में असमर्थ रहीं।

कोठारी कमीशन (1964–66) ने विद्यालय–शिक्षा से सम्बन्धित अपनी अनुशंसाओं में कृषि को शिक्षा के विभिन्न स्तरों में समाविष्ट करने का सुझाव दिया। आयोग के अनुसार राज्य प्राथमिक व माध्यमिक स्तर पर कृषि–शिक्षा को विशेष विद्यालयों में प्रदान करने में विफल रहे हैं। यद्यपि आयोग ने इस बात पर बल दिया कि शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों के माध्यमिक विद्यालयों में पाठ्यक्रम के द्वारा कृषि के लिए सम्मान व रुचि उत्पन्न करने की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों हेतु आयोग ने माध्यमिक स्तर पर विज्ञान–शिक्षण में कृषि पर विशेष बल देने का सुझाव दिया। परन्तु, आयोग ने इस बात को मुख्य रूप से रेखांकित किया कि ग्रामीण तथा शहरी विद्यार्थियों के ज्ञान का स्तर समान हो तथा उनके लिए उपलब्ध उच्च शिक्षा की सम्भावनाएँ भी समान हों। ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में शिक्षा का उद्देश्य मुख्य रूप से विद्यार्थी को ग्रामीण परिस्थितियों से अवगत कराना होना चाहिए तथा एक सामान्य प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए (रिर्पोट ऑफ़ दि एजुकेशन कमीशन, 1965, 112)। आयोग ने ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों में गणित व विज्ञान के शिक्षण पर अधिक महत्व देने की बात कही जिससे विद्यार्थी कृषि में हो रहे परिवर्तनों को ठीक प्रकार से समझ सकें। इन विद्यालयों में कृषि पर आधारित कार्य–अनुभव को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की भी संस्तुति दी। आयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में विज्ञान की शिक्षा तथा कार्य–अनुभव पर विशेष बल तो दिया, परन्तु इन विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं यथा प्रयोगशालाओं और विज्ञान–अध्यापकों के अभाव में ये संस्तुतियाँ अप्रभावी सिद्ध हुईं। कृष्ण कुमार का कहना है कि आयोग ने गाँधीजी की बेसिक शिक्षा के स्थान पर सामान्य शैक्षिक पाठ्यक्रम को महत्व दिया जो ग्रामीण विद्यालयों के लिए अप्रभावी साबित हुआ (कुमार 1996, 2373)। भारत में कृषि के क्षेत्र में इसी समय हरित क्रान्ति ने देश को खाद्यान उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर किया। शान्ताकुमार अपने वर्किंग पेपर में हरित क्रान्ति के स्कूली शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव को दो प्रक्रार से रेखांकित करते हैं। प्रथम, तकनीकी परिवर्तन स्वाभाविक रूप से लोगों को शिक्षा के लिए प्रेरित करेगा जिससे वह ज्ञान का उपयोग नवीन तकनीकी को समझने में कर सकें। दूसरा यह कि हरित क्रान्ति से लोगों की आय में वृद्धि हुई जिसके फलस्वरूप वे शिक्षा की ओर अग्रसर हुए। हरित क्रान्ति ने समाज में परिवर्तन नहीं किया, बल्कि इसका लाभ बड़े व उच्च वर्ग के कृषकों को अधिक मिला (शान्ताकुमार, 2016, 10)।

हाल के वर्षो में पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय पाठ्यचर्या योजना 2005 के अनुसार पुनर्नियोजित करने का प्रयास किया गया। एन.सी.एफ.–2005 में विज्ञान–शिक्षण को विद्यार्थी के चारों ओर के वातावरण से सम्बन्धित करने की बात तो की गयी है, परन्तु इस दिशा में कोई ठोस प्रयास नहीं किये गये (एन.सी.एफ.–2005, 55)।

पाठ्यक्रम में कृषि एवं ग्रामीण परिस्थितियों का पूर्ण अभाव है। अभी भी माध्यमिक स्तर पर विज्ञान–शिक्षण रटने की विधि द्वारा कराया जाता है।

वर्तमान समय में कृषक की स्थिति और शिक्षा का महत्व

भारत में कृषि सम्बन्धी प्रचार–प्रसार सेवाओं का विस्तार 1970 के दशक में विश्व बैंक के ट्रेनिंग एण्ड विजिट सिस्टम (Training and Visit System) से हुआ। इस परियोजना के अन्तर्गत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (आई.सी.ए.आर. – ICAR) ने कृषि–विज्ञान केन्द्र या फार्म साइंस सेंटर, लैब टू लैण्ड प्रोग्राम (Lab to Land Programme), ऑपरेशनल रिसर्च प्रोग्राम (Operational Research Programme) को प्रारम्भ किया। कृषि–विज्ञान केन्द्रों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य कृषकों को उनकी आवश्यकता के अनुरूप प्रशिक्षण देना तथा उनके कौशल में वृद्धि करना था। भारत में आज 680 कृषि–विज्ञान केन्द्र हैं, जिनमें से 460 राजकीय कृषि विश्वविद्यालयों तथा केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालयों, 64 आई.सी.ए.आर. द्वारा संचालित संस्थानों, 102 स्वयंसेवी संस्थानों द्वारा, 36 राज्य सरकारों, 3 पी.एस.यू. (PSU) तथा 15 अन्य शिक्षण संस्थानों द्वारा चलाये जा रहे हैं (http://www-atarijodhpur-res-in@about&kvks-html)।

भारत सरकार ने 1998 में किसानों तक तकनीक तथा नवीन ज्ञान के प्रसार के लिए लघु स्तर पर 28 ज़िलों में एग्रीकल्चुरल टैक्नालॉजी मैनेजमेंट एजेंसी (Agricultural Technology Management Agency – ATMA) की शुरुआत की जिसका विस्तार 548 ज़िलों में किया गया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ज़िला स्तर पर सरकार द्वारा कृषि–प्रसार के लिए चलाये जा रहे कार्यक्रमों का समन्वयन करना तथा कृषि–प्रसार, अनुसंधान तथा तकनीक के प्रसार में सहायता प्रदान करना है। इन सब प्रयासों के बावजूद नेशनल सैम्पल सर्वे के वर्ष 2012 के आँकड़ों के अनुसार भारत के मात्र 40% कृषक परिवारों को विभिन्न परियोजनाओं द्वारा तकनीकी सहायता उपलब्ध है। इसी सर्वे से यह भी ज्ञात होता है कि कृषकों के मध्य ज्ञान के प्रसार में सबसे प्रभावी साधन प्रगतिशील किसान से संवाद और रेडियो, टी.वी. व इन्टरनेट से प्राप्त सूचना हैं (एन.एस.एस.ओ. 2014, पृ. 38)। भारत में जनसंख्या वृद्धि तथा भूमि के बटने के कारण खेत की औसत माप 2.82 हैक्टेयर से घट कर 1.16 हैक्टेयर रह गयी है। छोटे और मझोले किसान खेती से सम्बन्धित ज्ञान को पाने में सबसे अधिक वंचित वर्ग हैं। बड़े, मझोले व छोटे किसानों का ज्ञान को ग्रहण करने का प्रतिशत क्रमशः 54, 51 व 38 रहा (एन.एस.एस.ओ., 2005)। वर्तमान समय में कृषक के सशक्तिकरण के लिए खेती में नवीन तकनीक के उपयोग के अलावा बाज़ार, खाद्य–प्रसंस्करण, कृषि–बीमा तथा उपज के मूल्य–निर्धारण आदि का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है। भारत में प्राकृतिक संसाधनों के निरन्तर दोहन तथा सीमित संसाधनों के सतत उपयोग

से कृषक के लिए खेती करना चुनौतीपूर्ण बनता जा रहा है। अतः विद्यालय पाठ्यक्रम में कृषि के विभिन्न आयामों से सम्बन्धित ज्ञान का समावेशन करना समय की माँग है।

कृषि–शिक्षा : नयी दिशा व नयी पहल

कृषि–शिक्षा के महत्व को वर्तमान समय में सरकार तथा ग़ैर–सरकारी संगठनों द्वारा समझा जा रहा है और इस क्षेत्र में कुछ रोचक प्रयोग भी सामने आ रहे हैं। प्रस्तुत लेख के इस भाग में कुछ ऐसे ही प्रयोगों का वर्णन किया जा रहा है। इस वर्णन द्वारा इस दिशा में हो रहे प्रयासों से समाज में इनके प्रभाव तथा इस कार्य को करने की दिशा में सामने आ रही चुनौतियों को समझने में मदद मिलेगी।

उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले में बालिकाओं के लिए अंग्रेजी माध्यम में कृषि आधारित प्राथमिक विद्यालय "गुड हार्वेस्ट स्कूल" का प्रारम्भ 2016 में हुआ। इस विद्यालय का अभी बड़ा भवन तो नहीं है, परन्तु एक फार्म, नर्सरी, सीड बैंक व कुछ मवेशी हैं। विद्यालय में एक पशुपालन केन्द्र है जिसमें गाय, बकरी, बतख व खरगोश आदि जानवर हैं। विद्यालय का मुख्य उद्देश्य बालिकाओं को सौहार्दपूर्ण वातावरण में ज्ञान प्रदान कर एक मिसाल के रूप में समाज में अपने को स्वावलम्बी बनाना है। समग्र ग्रामीण विकास हेतु सतत कृषि तथा पर्यावरण अनुकूल कृषि, जिसमें मृदा–सरंक्षण, प्राकृतिक संसाधनों का समुचित प्रबन्धन, जैव–विविधता व खाद्यान–सुरक्षा शामिल है, ग्रामीण रोज़गार के लिए आवश्यक हैं (श्रीवास्तव, 2017)। साथ ही साथ बालिकाओं को कृषि तथा उससे सम्बन्धित सभी क्रियाकलापों का ज्ञान प्रदान करना और कृषि–क्षेत्र में पलायन को हतोत्साहित करना भी इसका उद्देश्य है। विद्यालय–प्रबन्धन शिक्षाविदों तथा कृषि–विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिकों के सहयोग से प्राथमिक स्तर हेतु पाठ्यक्रम–निर्माण करने का प्रयास कर रहे हैं। खेल–खेल में सिखाना, कहानी सुनाना, चित्र दिखाना व कविता सुनना पाठ्यविधि के मुख्य अंग हैं। समय–समय पर विद्यार्थियों को चिड़ियाघर एवं मछलीघर ले जा कर उनमें पर्यावरण के प्रति रुचि जागृत करने का प्रयास किया जाता है। कृषि तथा उससे सम्बन्धित प्रक्रियाओं को समझने के लिए फ़सल की कटाई के बाद कोल्ड स्टोरेज व मण्डी (थोक बाज़ार) भी ले जाया जाता है। अतः यह विद्यालय "केयर ऑफ़ दि अर्थ, केयर ऑफ़ दि पीपुल, रिटर्न ऑफ़ सरप्लस टू अर्थ एण्ड पीपुल (Care of the Earth, Care of People, Return of Surplus to Earth and People)" के ध्येय की भावना के साथ आगे बढ़ रहा है (श्रीवास्तव, 2017)।

'विद्या वनम', तमिलनाडु के कोयम्बटूर ज़िले से 30 किलोमीटर की दूरी पर अनैकटटी (Anikatti) गाँव में 350 विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करने का कार्य कर रहा है। इस विद्यालय का प्रारम्भ प्रेमा रंगचारी ने विशेष रूप से इरुला (Irula)

आदिवासी समुदाय के बालकों को शिक्षित करने के लिए किया था, पर अब इस विद्यालय में दलित व अन्य पिछड़ा वर्ग के बच्चे भी आते हैं। इस विद्यालय में आदिवासी व दलित समाज के विद्यार्थियों के लिए निःशुल्क शिक्षा का प्रबन्ध है, परन्तु अन्य विद्यार्थियों से प्रति माह 200 रुपए का शुल्क लिया जाता है। विद्यालय में विज्ञान–शिक्षण में कृषि–सम्बन्धी नवीन ज्ञान यथा जेनेटिकली मोडीफाइड क्रॉप, ट्रॉन्सजेनिक, आर्गेनिक फार्मिंग, सस्टेनेबिल एग्रीकल्चर, पैस्ट कंट्रोल आदि पर विशेष बल दिया जाता है। विद्यालय के साथ एक फार्म भी जुड़ा है जिसमें विद्यार्थी स्वयं उद्यम कर के सीखते हैं (साईंनाथ, 2018)।

वर्तमान समय में विद्यालय–शिक्षा एक चुनौतीपूर्ण अवस्था से गुज़र रही है। यह शिक्षा न तो विद्यार्थी को उसके सामाजिक सरोकार के लिए चिन्तनशील बना रही है और न ही उसे आजीविका के लिए तैयार कर रही है। कृषि की समस्याएँ शिक्षित भारत के सन्दर्भ से दूर होती जा रही हैं। अतः शिक्षा और कृषि के बीच परस्पर सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है। विद्यालय स्तर पर शिक्षा को कृषि एवं ग्रामीण समाज के लिए संवेदनशील बना कर शिक्षा और कृषि के बीच बढ़ते अन्तर को कम किया जा सकता है।

सन्दर्भ सूची :

1. फातिमा, रज़िया (2015)। "परसेप्शन ऑफ़ स्कूल स्टूडेंट्स ऑफ़ केरला ऑन एग्रीकल्चर एण्ड इट्स इम्प्लीकेशन्स।" एब्सट्रैक्ट ऑफ़ एम.एससी. थीसिस। कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, वेलानीक्करा, थ्रिसूर, केरला।
2. गवर्नमेंट ऑफ़ इण्डिया (1949)। *रिर्पोट ऑफ़ दि यूनिवर्सिटी एजुकेशन कमीशन*। दिल्ली।
3. गवर्नमेंट ऑफ़ इण्डिया (1953)। *रिर्पोट ऑफ़ दि सैकण्डरी एजुकेशन कमीशन मुडालियर कमीशन*। दिल्ली।
4. गवर्नमेंट ऑफ़ इण्डिया (1967)। *रिर्पोट ऑफ़ कोठारी कमीशन 1964–66*। दिल्ली।
5. हेस, गैरी आर. (1968)। "अमेरिकन एग्रीकल्चरल मिशनरीज़ एण्ड एफ़र्ट्स एट इकनॉमिक इम्प्रूवमेंट इन इण्डिया।" *एग्रीकल्चरल हिस्ट्री* 42 (1) : पृष्ठ संख्या 23–34।
6. जोलपालयम, मंगम्मा (1990)। *टेक्नीकल एण्ड एग्रीकल्चरल एजुकेशन अ स्टडी ऑफ़ मद्रास प्रेसीडेंसी*। दिल्ली : कुमार पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ संख्या 45।
7. कुमार, दीपक एण्ड बिपाशा, राहा (2016)। *टिलिंग दि लैण्ड : एग्रीकल्चरल नॉलेज एण्ड प्रैक्टिसेज़ इन कोलोनियल इण्डिया*। दिल्ली : प्राइमस बुक्स।

8. कुमार, कृष्ण (1996)। "एग्रीकल्चरल मॉर्डनाइजेशन एण्ड एजुकेशन : कान्टुर्स ऑफ़ अ पाइंट ऑफ़ डिपार्चर।" *इकनॉमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली* 31 (35/37), पृष्ठ संख्या 2367&2369$2371&2373
9. मर्सर, स्टेफ़नी (2015)। "फूड एण्ड एग्रीकल्चर एजुकेशन इन दि युनाईटेड स्टेटस।" www. foodandagpolicy.org।
10. एन.सी.ई.आर.टी. (2005), *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क 2005*। नयी दिल्ली : नेषनल काउंसिल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग।
11. (1918)। *प्रोसिडिंग्स ऑफ़ दि बोर्ड ऑफ़ एग्रीकल्चर हैल्ड इन पूना ऑन दि 10 दिसम्बर 1917 एण्ड फॉलोइंग डेज़ विथ अपेन्डिक्स*। केलकटा।
12. रंधावा, एम. एस. (1983)। *अ हिस्ट्री ऑफ़ एग्रीकल्चर इन इण्डिया 1757–1857, वॉल्युम III* / नयी दिल्ली : इण्डियन काउंसिल ऑफ़ एग्रीकल्चरल रिसर्च।
13. साईनाथ, पी. (2015)। "डिबेटिंग राइस इन दि फॉरेस्ट ऑफ़ लर्निंग।" www.ruralindiaonline. org/articles/debating–rice–in–the–forest–of–learning 1/12।
14. शान्ताकुमार, वी. (1916)। "एन इंटरवेंशन इनटू डिबेट्स ऑन 'वर्क–इन–एजुकेशन' एण्ड स्किल डिवेल्पमंट इन इण्डिया।" वर्किंग पेपर 3। बेंगलूरु : अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी।
15. श्रीवास्तव, श्रुति (2017)। "अ विलेज इन यू. पी. होम टू इण्डिया'ज फर्स्ट ऑल गर्ल्स एग्रीकल्चर प्राइमरी स्कूल।" http:/seminar%20AU/A%20Village%20In%20U.P.%20Is%20Home%20To%20India%E2%80%99s%20First%20All-Girls%20Agricultural%20Primary%20School%20%E2%80%94%20EARTHA.html
16. दि न्यूज़ मिनट (2015)। "केरला स्कूल टू इंट्रोड्युज सस्टैनबिल एग्रीकल्चर एज़ सब्ज़ेक्ट।"
17. https://www.thequint.com/news/india/kerala-school-to-introduce-sustainable-agriculture-as-subject 1/11
18. वोल्कर, जे. (1893)। *रिर्पोट ऑन दि इम्प्रूवमेंट ऑफ़ इण्डियन एग्रीकल्चर*।
19. वेथेरा, काबुगी सालोम (2013)। "चैलेंजेंस टू टीचिंग एण्ड लर्निंग ऑफ़ एग्रीकल्चर इन सैकेण्डरी स्कूल इन काकुयुनी डिवीज़न, मचकोस काउटी केन्या।" एम.ए. थीसिस, केन्याटा यूनिवर्सिटी
20. http:/www./statisticstimes.com/economy/sectorwise-gdp-contribution-of-india.php

21. गवर्नमेंट ऑफ़ इण्डिया (2014)। *की इंडिकेटर्स ऑफ़ सिचुएशन ऑफ़ एग्रीकल्चरल हाउसहोल्ड्स इन इण्डिया एन.एस.एस.ओ. 70 राउण्ड जनवरी टू दिसम्बर 2013*। नयी दिल्ली : मिनिस्ट्री ऑफ़ स्टेटिस्टिक्स एण्ड प्रोग्राम इम्प्लीमेंटेशन नेशनल सैम्पल सर्वे ऑफ़िस।
22. सदगोपाल, अनिल (2016)। "स्किल इण्डिया ऑर डिस्किलिंग इण्डिया : एन एजेंडा ऑफ़ एक्सक्लूज़न"। *इकनॉमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली* एलआई (35)।
23. http://www.atarijodhpur.res.in/about-kvks.html
24. (1918)। *बोर्ड ऑफ़ एग्रीकल्चर*, 90।